1972(5) eILR(PAT) SC 1

हरि सिंह और अन्य.

बनाम

सैन्य संपदा अधिकारी और ए.एन.आर.

3 मई 1972

[एस। एम. सीकरी, सी.जे., जे.एम. शेलत, ए, एन. रे, आई.डी. दुआ, डी.जी. पालेकर, एच.आर. खन्ना और एम.एच. बेग, जे.जे.]

सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जाधारियों की बेदखली) अधिनियम, (1971 का 15), एस.एस. 15 एवं 20-1958 के अंतर्गत पारित बेदखली आदेशों का मान्यकरण-अधिनियम-यदि संवैधानिक रूप से वैध हो।

जब सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जाधारियों की बेदखली) अधिनियम, 1958 लागू था, तो सरकार के पास सार्वजनिक परिसर पर अनधिकृत कब्जा करने वाले व्यक्तियों को बेदखल करने के दो वैकल्पिक उपाय थे, पहला, अदालत में मुकदमा दायर करना। निष्कासन के लिए, और दूसरा, एस के तहत। अधिनियम की धारा 5(1), जिसने संपत्ति अधिकारी को बेदखली का आदेश देने की शक्ति प्रदान की, इसके तहत आदेश पारित किए गए। 1961 और 1964 में 5, अपीलकर्ताओं को बेदखल कर दिया गया और, उनके द्वारा उच्च न्यायालय में दायर की गई रिट याचिकाएँ खारिज कर दी गईं। जब इस न्यायालय में उनकी अपीलें लंबित थीं, सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जेदार की बेदखली) अधिनियम, 1971 लागू हुआ। इसने 1958-अधिनियम को निरस्त कर दिया और 16 सितंबर, 1958 से पूर्वव्यापी प्रभाव डाला। इसके तहत, सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जे वाले व्यक्तियों को बेदखल करने के लिए केवल एक प्रक्रिया उपलब्ध है। इसकी योजना यह है कि यह संपत्ति अधिकारी को उन व्यक्तियों को नोटिस जारी करने की शक्ति प्रदान करता है जो किसी भी सार्वजनिक परिसर पर अनधिकृत कब्जा कर रहे हैं और कारण बता सकते हैं कि बेदखली का आदेश क्यों नहीं दिया जाना चाहिए, और आधार पर विचार करने के बाद, आदेश पारित करने के लिए बेदखली. 'परिसर' को किसी भूमि या किसी भवन या किसी भवन के हिस्से को शामिल करने के लिए परिभाषित किया गया है। धारा 20 में प्रावधान है कि 1958-अधिनियम के तहत किया गया कोई भी काम या की गई या की जाने वाली कथित कार्रवाई उतनी ही वैध और प्रभावी मानी जाएगी जैसे कि ऐसी बात या कार्रवाई 1971 के संबंधित प्रावधानों के तहत की गई या की गई हो। कार्यवाही करना। साथ ही, 15 सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जे वाले किसी भी व्यक्ति को बेदखल करने के संबंध में किसी मुकदमे या कार्यवाही पर विचार करने के लिए अदालत की न्यायिक कार्रवाई पर रोक लगाता है। अपीलकर्ताओं ने अपीलों में 1971-अधिनियम की संवैधानिकता को भी चुनौती दी।

अपीलें खारिज करते हुए,

हेल्ड (प्रति एस.एम. सीकरी, सी.जे.जे.एम. शेलत. ए.एन. रे, आई.डी. दुआ, डी.जी. पालेकर और एच.आर. खन्ना, जे.जे.): (1) 1971 की वैधता अधिनियम इस पर निर्भर करता है,

(ए) 1958-अधिनियम के तहत किए गए किसी भी कार्य या कार्रवाई को मान्य करने की विधायी क्षमता;

(बी) क्या विधायिका के पास विषय वस्तु पर क्षमता है; और

(सी) क्या विधानमंडल ने सत्यापन द्वारा उस दोष को दूर कर दिया है जो न्यायालय ने पिछले कानून में पाया था। [523 डी; 527 ई-एफआई

(ए) नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम पंजाब राज्य में, [1967]3 एस.सी.आर. 399 इस न्यायालय ने माना कि एस. पंजाब परिसर और भूमि (बेदखली और किराया वसूली) अधिनियम, 1959 की धारा 5, कला का उल्लंघन था। संविधान के अनुच्छेद 14 में इस आधार पर कि, सामान्य कानून के तहत कार्रवाई करने या अनुभाग द्वारा प्रदान की गई कठोर प्रक्रिया का पालन करने के लिए इसे कलेक्टर के अनिर्देशित विवेक पर छोड़ दिया गया है। यह मानते हुए कि 1958-अधिनियम असंवैधानिक है। इसी आधार पर यह तर्क नहीं दिया जा सकता कि 1971-अधिनियम के तहत 1958-अधिनियम में किए गए किसी भी कार्य को मान्य नहीं किया जा सकता, क्योंकि, 1971-अधिनियम 16 सितंबर 1958 से प्रभावी है, और यह प्रावधान करता है कि 1958-अधिनियम के तहत की गई कार्रवाई 1971-अधिनियम के तहत की गई मानी जाएगी। यह पिछले अधिनियम के तहत की गई कार्रवाई को मान्य करने वाले बाद वाले अधिनियम का मामला नहीं है, बल्कि ऐसा मामला है। एक डीमिंग प्रावधान द्वारा, पहले अधिनियम के तहत किए गए कार्यों या चीजों को बाद के वैध अधिनियम के तहत किया गया माना जाता था। [522 डी-एफ; 524 ई-एफ; 525 ई-जीआई एमएस।

वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड बनाम मद्रास राज्य, [1963] 2 एस.सी.आर. 747, अनुसरण किया गया।

उपायुक्त और कलेक्टर, कामरूप और अन्य बनाम दुर्गा नाथ सरमा, [1968] 1 एस.सी.आर. 1 एस.सी.आर. 561, संदर्भित.

(बी) विधानमंडल के पास 1971-अधिनियम को अधिनियमित करने और सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जे वाले व्यक्तियों को बेदखल करने के लिए एक त्वरित प्रक्रिया प्रदान करने और पूर्वव्यापी संचालन के साथ कानून पारित करने की विधायी क्षमता थी। [527 एफ-जीआई]

(सी) विधानमंडल केवल एक प्रक्रिया को छोड़कर पूर्वव्यापी प्रक्रियाओं में से किसी एक को कार्रवाई से बाहर कर सकता है और इस प्रकार उत्तरी भारत कैटरर्स मामले में पाए गए भेदभाव के दोष को दूर कर सकता है। [526 ई-जी]

मैसूर राज्य और अन्य. बनाम डी. अचैया चेट्टी आदि, [1963] 3 एस.सी.आर. 55, अनुसरण किया गया।

श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड एवं अन्य बनाम ब्रोच नगर पालिका और अन्य। [1970] 1 एस.सी.आर. 388, संदर्भित.

(2) चूंकि 'परिसर' शब्द का अर्थ वह भूमि है जिसमें कृषि भूमि शामिल है, अपीलकर्ता जो सरकार की कृषि भूमि पर अनधिकृत कब्जे में था, उसे अधिनियम के तहत वैध रूप से बेदखल कर दिया गया था। [528 ए]

(3) बेदखली की प्रक्रिया पुनाब किरायेदारी अधिनियम, 1887 के तहत उपलब्ध हो सकती है; लेकिन इस आधार पर यह तर्क नहीं दिया जा सकता कि 1971-अधिनियम के तहत प्रक्रिया ने कला को ठेस पहुंचाई है। 14. 1971-अधिनियम सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जे वाले व्यक्तियों को बेदखल करने के लिए केवल एक प्रक्रिया प्रदान करता है, और इसके तहत भेदभाव की कोई बुराई नहीं है। [528 ए-सी]

एम. एच. बेग जे.: (1) इस न्यायालय ने 1958-अधिनियम के किसी भी हिस्से को कानून का शून्य हिस्सा घोषित नहीं किया था, और इसलिए, कला को लागू करने का कोई सवाल ही नहीं है। संविधान का 141 उत्तरी भारत कैटरर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम पंजाब राज्य, [1967] 3 एस.सी.आर. मामले में इस न्यायालय के फैसले के कारण उत्पन्न होता है। 399. [529 सी]

(2) यह धारणा कि 1958-अधिनियम के प्रावधान शून्य थे और इसलिए इसके तहत की गई कार्रवाई को वैध या मान्य नहीं किया जा सकता है गलत है.. [529 सी-इ]

उत्तरी भारत में कैटरर्स केयर एस. पंजाब पब्लिक प्री के 5-अन्याय एवं भूमि (बेदखली एवं लगान वसूली) अधिनियम 1959 था दोनों में से किसी एक को अपनाने का विकल्प शेष रहने के कारण अमान्य माना गया धारा के अंतर्गत प्रक्रिया या सामान्य कानून के अंतर्गत प्रक्रिया जो अधिनियम के बाहर है। पंजाब एक्ट में जो खामी या कमी है इस धारा को अमान्य कर दिया गया क्योंकि इसमें इसके विरुद्ध निषेध शामिल था वैकल्पिक प्रक्रिया और नहीं, इसमें कुछ ऐसा शामिल था जो था, अपने आप में, निषिद्ध. इस प्रकार वास्तव में अनुभाग की असंवैधानिकता अधिनियम से बाहर के मामलों से उत्पन्न हुआ। उस मामले में कुछ भी स्पष्ट नहीं था इससे भी अधिक यद्यपि अधिक कठोर प्रक्रिया अन्यथा हो सकती है वैध है, फिर भी इसमें विचार किए गए कानून के प्रावधानों की समग्रता से उभरने वाली स्थिति में यह अप्रवर्तनीय हो गया। निर्णय में इस दृष्टिकोण को उचित ठहराने के लिए कुछ भी नहीं है कि अनुभाग स्वयं या प्रारंभ से ही शून्य था। [530 बी-एफ]

(3) 1971-अधिनियम का परिणाम पूर्वव्यापी रूप से पुनः अधिनियमित होने से कम नहीं है ताकि इस तर्क के लिए कोई आधार खुला न रहे कि सार्वजनिक परिसर के विभिन्न अनधिकृत निवासियों के बीच भेदभाव की कोई संभावना है। चूंकि 1971-अधिनियम लागू होने की तारीख से 1958-अधिनियम के तहत किसी भी पिछली कार्रवाई की वैधता का निर्णय 1971-अधिनियम के प्रावधानों के आलोक में किया जाना होगा। यदि कोई कार्यवाही लंबित है तो उसकी शुद्धता और वैधता 1971-अधिनियम में निर्धारित आवश्यकताओं द्वारा शासित होगी, क्योंकि, 1958-अधिनियम के तहत की गई कार्यवाही 1971-अधिनियम के तहत कार्यवाही मानी जाएगी। 1971-एसी में प्रक्रिया द्वारा संरक्षित अधिकारों का पिछले अधिनियम के तहत की गई कार्रवाई से उल्लंघन नहीं हुआ, क्योंकि, अपील के अधिकार सहित बेदखली की प्रक्रिया दोनों अधिनियमों के तहत समान है। [530 जी-एच; 531 ए- डी.]

(4) भले ही यह सत्यापन का मामला है और पुनः अधिनियमन का नहीं, वास्तव में, इसने किसी भी संभावित भेदभावपूर्ण कार्य को भी अमान्य कर दिया है जो 1958-अधिनियम की अवधि के दौरान किया गया हो सकता है। [531 डी-ई]

(5) इस तर्क में कोई दम नहीं है कि 1971-अधिनियम का धारा 20 वास्तव में उस चीज़ को मान्य करने के लिए था जो केवल 'अतीत में किया गया था, और इसलिए, इसे 1971-अधिनियम के तहत की गई कार्रवाई नहीं माना जा सकता है। 'कथित' शब्द का प्रयोग केवल संबंधित अधिनियम के तहत की गई पिछली कार्रवाई का वर्णन या पहचान करने के लिए किया जाता है और इसके अलावा इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसलिए अब की गई कार्रवाई 1971 के अधिनियम के तहत की गई मानी जाएगी। [531 ई-जी]

(6) यदि बिल्कुल भी, 1958-अधिनियम में कठोर प्रक्रिया केवल छाया के अधीन थी, या, अधिनियम के बाहर आने वाले कारणों के कारण तनाव या अप्रवर्तनीयता की स्थिति में थी; लेकिन एक बार जब नए अधिनियम द्वारा उन कारणों को समाप्त कर दिया गया तो छाया हट गई और प्रक्रिया पूर्वव्यापी रूप से क्रियाशील और प्रभावी हो गई। 1971-अधिनियम का प्रभाव यह था कि अधिनियम के बाहर किसी भी तरह से अनधिकृत कब्जेदारों को बेदखल करने का विकल्प पूर्वव्यापी रूप से बंद कर दिया गया था और यह कानून के अंतर्गत था।

ऐसा करने के लिए संसद की मूल क्षमता के विरुद्ध कार्रवाई की गई 1971-अधिनियम के प्रावधानों द्वारा परीक्षण किए जाने पर अपीलकर्ता अमान्य नहीं है [532 ए-डी]

केशवन माधव मेनन बनाम बॉम्बे राज्य, [1951] एस.सी.आर. 228, बेहराम खुर्शीद पेसिकाका बनाम द स्टे ऑफ बॉम्बे, [1955] 1 एस.सी.आर. 613, सगीर अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य। एवं अन्य. [1955] 1 एस.सी.आर. 707. भीकाजी नारायण धाकरास और अन्य। वी. द स्टेयर ऑफ़ एम. पी. एंड ऑर्स., [1955) 2 एस.सी.आर. 589, एम. पी. वी. सुंदररामियर एंड कंपनी बनाम द सारे ऑफ ए. पी. एंड अन्य. [1958] एस.सी.आर. 1422, दीप चंद

बनाम उत्तर प्रदेश राज्य। एवं अन्य. [1959] सप्प. 2 एस.सी.आर. 8, महेंद्र लाल जैनी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य। एवं अन्य., [1963] पूरक। 1 एस.सी.आर. 912, बी. शमा राव बनाम केंद्र शासित प्रदेश पांडिचेरी, [1967] 2 एस.सी.आर. 650, डिप्टी कमिश्नर एवं कलेक्टर, कानपुर एवं अन्य। बनाम दुर्गा नाथ सरमा, [1968] 1 एस.सी.आर. 561 एक पी. भूमा रेड्डी बनाम मैसूर राज्य एवं अन्य, [1969] 3 एस.सी.आर. 14 को रेफर किया गया को।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 493 ,1967 का.

6 सितंबर के फैसले और आदेश के खिलाफ अपील,1966 पंजाब उच्च न्यायालय के पत्र पेटेंट अपील संख्या 234 में 1963 की और 1968 की सिविल अपील संख्या 1456।

1966 के सिविल रिट क्षेत्राधिकार मामले संख्या 222 में पटना उच्च न्यायालय के 21 दिसंबर, 1967 के फैसले और आदेश के खिलाफ अपील।

अपीलकर्ताओं की ओर से रामेश्वर दाल, शारदा रानी और ए. डी. माथुर (सी.ए. संख्या 493/1967 में)।

अपीलकर्ताओं के लिए के.के. सिन्हा, एस.के. सिन्हा, बी.बी. सिन्हा और एस.के. बिसारिया (1967 के सी.ए. संख्या 1456 में)।

प्रतिवादी नंबर 1 (दोनों अपीलों में) के लिए जगदीश स्वरूप, भारत के सॉलिसिटर-जनरल, एल.एम. सिंघवी, पी. परमेश्वर राव और एस.पी. नायर।

रविंदर नारायण, भुवनेश कुमार और ए. सुब्बा राव, हस्तक्षेपकर्ता नंबर 1 के लिए (1967 के सी.ए. नंबर 493 में)।

सोली सोराबजी, ललित भसीन, आर.एन. बनर्जी, रविंदर नारायण और पी. सी. भरतरी, हस्तक्षेपकर्ता संख्या 2 के लिए (1967 के सी.ए. संख्या 493 में)।

आर. ए.के. सेन, एस.सी. मजूमदार और आर.के. जैन, हस्तक्षेपकर्ता संख्या 4 के लिए (1967 के सी.ए. संख्या 493 में)।

सीकरी, सी.जे., शेलत, रे, दुआ, पालेकर और खन्ना, जे.जे. का निर्णय। रे, जे. BEC, जे. द्वारा एक अलग सहमति वाली राय दी गई थी।

रे, जे. इन दो अपीलों ने मूल रूप से सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जेदारों की बेदखली) अधिनियम, 1958 की संवैधानिकता को उठाया। चुनौती इस आधार पर थी कि 1958 अधिनियम की धारा 5(1) संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करती है। 1958 अधिनियम की धारा 5(1) ने संपदा अधिकारी को सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जा करने वाले व्यक्तियों के खिलाफ बेदखली का आदेश देने की शक्ति प्रदान की। संविधान के अनुच्छेद 14 के विरुद्ध 1958 अधिनियम की धारा 5(1) का दोष था। सरकार के पास अनधिकृत कब्जे वाले व्यक्तियों को बेदखल करने के दो वैकल्पिक उपाय थे। एक यह था कि बेदखली के लिए मुकदमा दायर करके अदालत में उपाय खोजा

जाए। दूसरा उपाय 1958 के अधिनियम द्वारा निर्धारित था। 1958 अधिनियम पर इस आधार पर हमला किया गया था कि 1958 अधिनियम के तहत कठोर प्रक्रिया के आवेदन के लिए सार्वजनिक परिसरों के कब्जे में से किसी एक को चुनने और उनमें से कुछ को चुनने के लिए अधिकारियों का विवेकहीन विवेक था।

1958 अधिनियम को 1968 में संशोधित किया गया था। धारा 10ई को 1958 अधिनियम में पेश किया गया था। धारा 10ई ने किसी भी सार्वजनिक परिसर के अनधिकृत कब्जे वाले किसी भी व्यक्ति को बेदखल करने या धारा 7(1) के तहत देय किराए की बकाया राशि की वसूली या देय क्षति के संबंध में किसी भी मुकदमे या कार्यवाही पर विचार करने के लिए सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र में बाधा उत्पन्न की। अधिनियम की धारा 7(2) के तहत या धारा 9(5) के तहत दी गई लागत। अपीलकर्ताओं ने यह तर्क उठाया है कि अधिनियम की धारा 10ई द्वारा किया गया संशोधन पूर्वव्यापी नहीं था और इसलिए कार्यवाही विषय बनती है। अपीलों का मामला हम संशोधन से नहीं बचा पाए।

हरि सिंह द्वारा दायर अपील में एक बिहारी लाल ने सैन्य संपदा अधिकारी, दिल्ली सर्कल के माध्यम से राष्ट्रपति से अंबाला छावनी में 36.73 एकड़ भूमि का पट्टा प्राप्त किया। पट्टा 1 मई, 1952 से चार वर्षों के लिए था। वार्षिक किराया रु. था। 3310/-. किराया अग्रिम देय था। बिहारी लाल भुगतान करने में असफल रहे। पट्टा 1 मई, 1957 को समाप्त हो गया। पट्टे की अवधि नहीं बढ़ाई गई। बिहारी लाल कब्जा छोड़ने में असफल रहे। बिहारी लाल को बेदखल करने के लिए 1958 अधिनियम के तहत 17 जून, 1960 को एक आदेश था। अपीलकर्ताओं ने बिहारी लाल के उप-पट्टेदार होने का दावा किया। पट्टे में सक्षम प्राधिकारी की अनुमति से ही उपकिराए पर देने की अनुमति दी गई है। अपीलकर्ताओं को 1958 अधिनियम के तहत नोटिस दिया गया था कि वे कारण बताएं कि उन्हें अधिनियम के तहत बेदखल क्यों नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि वे भूमि पर अनधिकृत कब्जे में थे। संपदा अधिकारी ने पाया कि उप-पट्टे की अनुमति देने वाले सक्षम प्राधिकारी की कोई मंजूरी नहीं थी। 25 जुलाई, 1961 को 1958 अधिनियम की धारा 5 के तहत अपीलकर्ताओं को बेदखल करने का आदेश पारित किया गया। अपीलकर्ताओं ने जिला न्यायाधीश, अंबाला के समक्ष अपील को प्राथमिकता दी। 18 अप्रैल, 1962 को अपील खारिज कर दी गई। इसके बाद अपीलकर्ताओं ने पंजाब उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की। विद्वान एकल न्यायाधीश ने 13 मई, 1963 को याचिका खारिज कर दी। अपीलकर्ताओं ने लेटर्स पेटेंट अपील को प्राथमिकता दी। उच्च न्यायालय ने 5 सितंबर, 1966 को अपील खारिज कर दी। हरि सिंह और अन्य द्वारा दायर अपील पंजाब उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ प्रमाण पत्र द्वारा है।

भारतीय होटल एवं अन्य द्वारा दायर अपील यह प्रमाण पत्र पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 12 दिसंबर, 1967 के निर्णय के विरुद्ध है। अपीलकर्ता रतनपुरा में भारतीय होटल के नाम से व्यवसाय करने वाले भागीदार हैं। साझेदारों में से एक ने बिहार के छपरा में एक भूखंड का पट्टा प्राप्त किया। रामलखन प्रसाद पट्टा प्राप्त करने वाले साझेदार हैं। संपदा अधिकारी, पूर्वोत्तर रेलवे ने अपीलकर्ताओं को इस आधार पर बेदखल करने के लिए राम लखन प्रसाद को 1958 अधिनियम की धारा 4 (1) के तहत 12 जून, 1954 को एक नोटिस दिया कि अपीलकर्ता अनधिकृत कब्जे में थे। संपदा अधिकारी ने 16 मार्च, 1966 को अपीलकर्ताओं के खिलाफ बेदखली का आदेश पारित किया। इसके बाद बेदखली के आदेश को रद्द करने के लिए याचिकाकर्ताओं ने पटना उच्च न्यायालय का रुख किया। 21 दिसंबर को

हाईकोर्ट. 1967 में अनाउंसर्स की रिट याचिका खारिज कर दी गई। अपील उच्च न्यायालय के निर्णय के प्रमाण पत्र द्वारा है।

हरि सिंह और अन्य द्वारा दायर अपील में उच्च न्यायालय में दो तर्क उठाए गए थे। सबसे पहले, यह कहा गया कि 'परिसर' शब्द कृषि भूमि पर लागू नहीं होता है। दूसरी बात यह कही गई कृषि भूमि पर कानून राज्य के विशेष विधायी प्रमुख के अंतर्गत था, और इसलिए, केंद्रीय अधिनियम असंवैधानिक था। हाई कोर्ट ने दोनों दलीलें खारिज कर दीं.

भारतीय होटल और अन्य द्वारा दायर अपील में अपीलकर्ताओं ने मुख्य तर्क उठाया कि 1958 अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है। उच्च न्यायालय ने नॉर्दर्न इंडिया कैअरर्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य मामले में इस न्यायालय के फैसले का हवाला दिया। उच्च न्यायालय ने माना कि नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम पंजाब राज्य और अन्य[1] मामले में इस न्यायालय का निर्णय पंजाब सार्वजनिक परिसर और भूमि (बेदखली और किराया वसूली) अधिनियम, 1959 और 1958 अधिनियम के प्रावधानों पर था जो विषय वस्तु का गठन करता है। पटना उच्च न्यायालय के फैसले में विशिष्ट विशेषताएं थीं।

इस संदर्भ में अपीलकर्ताओं ने 1958 अधिनियम की संवैधानिकता को उठाया। इन अपीलों के लंबित रहने के दौरान सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जाधारियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 को 23 अगस्त, 1971 को राष्ट्रपति की सहमति प्राप्त हुई। अपीलकर्ताओं को एक नया आधार जोड़ने की अनुमति दी गई। नए आधार ने 1971 के अधिनियम की संवैधानिकता को चुनौती दी।

वर्तमान अपीलों का निर्णय इस प्रश्न पर केंद्रित है कि क्या 1971 अधिनियम संवैधानिक रूप से वैध कानून है। 1971 का अधिनियम 16 सितंबर को लागू हुआ माना जाता है। 1958 धारा 11, 19 और 20 को छोड़कर जो 23 अगस्त, 1971 को लागू हुई। 1971 अधिनियम की धारा 11 अधिनियम के तहत अपराध की बात करती है। अपराध यह है कि यदि कोई व्यक्ति जिसे इस अधिनियम के तहत किसी सार्वजनिक परिसर से बेदखल कर दिया गया है, वह ऐसे कब्जे के अधिकार के बिना फिर से परिसर पर कब्जा कर लेता है, तो उसे एक वर्ष तक की कैद की सजा या जुर्माने से, जिसे बढ़ाया जा सकता है, दंडित किया जा सकता है। एक हजार रुपये तक, या दोनों के साथ। धारा 19 अधिनियमित करती है कि 1958 अधिनियम निरस्त किया जाता है। सबसे महत्वपूर्ण धारा 20 है। धारा 20 इस प्रकार है:---

"किसी भी अदालत के किसी फैसले, डिक्री या आदेश के बावजूद, कुछ भी किया गया या कोई कार्रवाई की गई (जिसमें नियम या बनाए गए आदेश, नोटिस जारी किए गए, बेदखली का आदेश दिया गया या किया गया, क्षति का आकलन किया गया, किराया या क्षति या कॉस की वसूली और शुरू की गई कार्यवाही शामिल है) या डुमॉर्टेड सार्वजनिक परिसर (अनाधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम 1958 के तहत किया गया या लिया गया कार्य (इसके बाद इस धारा में 1958 अधिनियम के रूप में संदर्भित) उतना ही वैध और प्रभावी माना जाएगा जैसे कि

---

[1] [1967] 3 एस.सी.आर. 399

ऐसा कुछ या कार्रवाई की गई थी या इस अधिनियम के संबंधित प्रावधानों के तहत लिया गया, जो धारा 1 की उप-धारा (3) के तहत 16 सितंबर, 1958 को लागू हुआ माना जाएगा और तदनुसार-

किसी व्यक्ति की उपस्थिति और शपथ पर उसकी जांच करना; दूसरे, दस्तावेज़ की खोज और नीलामी की आवश्यकता; और तीसरा, कोई अन्य मामला जो निर्धारित किया जा सकता है। अधिनियम की धारा 10 अधिनियम की धारा 10 में उल्लिखित परिस्थितियों में आदेशों को अंतिम रूप देने का प्रावधान करती है।

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इस न्यायालय ने 4 अप्रैल, 1967 को पंजाब सार्वजनिक परिसर और भूमि (बेदखली और किराया वसूली) अधिनियम, 1959 की वैधता पर नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स प्राइवेट लिमिटेड ([1]) मामले का फैसला किया और धारा 5 घोषित की। उस अधिनियम के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा। नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स प्राइवेट लिमिटेड ([1]) मामले में पंजाब राज्य ने 24 सितंबर, 1953 से छह साल की अवधि के लिए चंडीगढ़ में माउंट व्यू होटल को पट्टे पर दिया था। संपदा अधिकारी ने एक नोटिस दिया उस मामले में अपीलकर्ताओं को यह कारण बताने की आवश्यकता है कि बेदखली का आदेश क्यों नहीं दिया जाना चाहिए। 1959 के पंजाब अधिनियम की धारा 5 में प्रावधान है कि यदि सार्वजनिक परिसर पर अनधिकृत कब्जे के कारण और किसी व्यक्ति द्वारा पेश किए गए साक्ष्य पर विचार करने के बाद और उसे सुनवाई का उचित अवसर देने के बाद, कलेक्टर संतुष्ट है कि सार्वजनिक परिसर अनधिकृत कब्जे में है। 'बेदखली का आदेश दे सकते हैं' 1959 अधिनियम की धारा 5 में यह कहा गया था कि कुछ किरायेदारों के मामले में बेदखली का आदेश देना कलेक्टर के विवेक पर छोड़ दिया गया था और दूसरों के मामले में आदेश नहीं दिया गया था। यह पाया गया कि धारा 5 में कोई मार्गदर्शक सिद्धांत या नीति नहीं दी गई जिसके तहत कलेक्टर को यह तय करना था कि उसे किन मामलों में एक या दूसरी प्रक्रिया का पालन करना चाहिए। इस न्यायालय ने पाया कि सरकार के पास दो विकल्प खुले हैं। एक सामान्य कानून के तहत था. 1959 के अधिनियम के तहत अन्य एक कठोर और 'अधिक प्रतिकूल उपाय' था। परिणामस्वरूप, धारा 5 को संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन माना गया।

1971 अधिनियम, 1958 अधिनियम के तहत किए गए किसी भी काम या की गई या की जाने वाली कथित कार्रवाई को मान्य करने के लिए अस्तित्व में आया। पहले स्थान पर, धारा 11, 19 और 20 को छोड़कर, 1971 अधिनियम को 16 सितंबर, 1958 से पूर्वव्यापी बना दिया गया है। दूसरे स्थान पर, 1971 अधिनियम की धारा 20 जिसे सत्यापन के लिए अनुभाग के रूप में वर्णित किया गया है, यह प्रावधान करती है कि कुछ भी किया गया या की गई या की गई या की जाने वाली कथित कार्रवाई उतनी ही वैध और प्रभावी मानी जाएगी जैसे कि ऐसी कोई बात या कार्रवाई 1971 के अधिनियम के संबंधित प्रावधानों के तहत की गई या की गई हो। तीसरे स्थान पर. 1971 अधिनियम की धारा 15 द्वारा सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जे वाले किसी भी व्यक्ति को बेदखल करने के संबंध में अदालतों के क्षेत्राधिकार पर रोक लगा दी गई। इसलिए, यह इस प्रकार है कि 1971 अधिनियम के प्रावधानों के तहत, जो 16 सितंबर, 1958 से पूर्वव्यापी प्रभाव में था, सार्वजनिक परिसर के अनधिकृत कब्जे में व्यक्तियों को बेदखल करने के लिए केवल एक प्रक्रिया उपलब्ध है। वह प्रक्रिया 1971 में पाई जाती है कार्यवाही करना। अन्य

अदालतों के पास इन मामलों में कोई क्षेत्राधिकार नहीं है। अनुच्छेद 14 का जो दोष इस न्यायालय द्वारा नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स प्राइवेट लिमिटेड (') के निर्णय में पाया गया था, वह अब 1971 अधिनियम के तहत प्रकट नहीं होता है।

अपीलकर्ताओं के वकील ने तर्क दिया कि 1958 अधिनियम के तहत दिए गए आदेश या बेदखली का आदेश 1971 अधिनियम की धारा 20 द्वारा मान्य नहीं है और न ही किया जा सकता है। इस तरह से विवाद को बढ़ाया गया. 1971 के अधिनियम की धारा 20 यह पूर्वधारणा और अभिधारणा करती है कि 1958 का अधिनियम लागू था और अस्तित्व में था। 1958 का अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन था और तदनुसार यह कभी अस्तित्व में नहीं आया और गैर-स्थायी था। तदनुसार, 1958 अधिनियम के तहत कोई बेदखली आदेश नहीं हो सकता है। दूसरे, संसद सामान्य कानून द्वारा यह अधिनियम नहीं बना सकती कि असंवैधानिक 1958 अधिनियम के तहत बेदखली को 1971 अधिनियम के तहत वैध बेदखली माना जाएगा।

1971 अधिनियम की वैधता 1958 अधिनियम के तहत किए गए किसी भी काम या की गई या की जाने वाली कथित कार्रवाई को मान्य करने की विधायी क्षमता पर निर्भर करती है। मान्यता यह अधिनियमित करके प्राप्त की जाती है कि किया गया कोई भी काम या की गई कोई कार्रवाई या की गई या की गई कथित कार्रवाई उतनी ही वैध और प्रभावी मानी जाएगी जैसे कि ऐसी चीज या कार्रवाई 1971 के अधिनियम के संबंधित प्रावधानों के तहत की गई या की गई हो। . इसका परिणाम यह हुआ कि 1971 अधिनियम को 16 सितंबर, 1958 से पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू किया गया है। 1958 अधिनियम के तहत किया गया कोई भी कार्य या कोई भी कार्रवाई 1971 अधिनियम के प्रावधानों के तहत वैध और प्रभावी मानी जाएगी। इसका परिणाम यह है कि की गई या की गई कार्रवाई की वैधता का परीक्षण 1971 अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में किया जाना है। मेसर्स वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड बनाम मद्रास राज्य (2) में इस न्यायालय ने माना कि कानून बनाना और इसे पूर्वव्यापी रूप से लागू करना विधायिका की क्षमता के भीतर है। वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड (2) मामले में इलेक्ट्रिक कंपनी मद्रास विद्युत आपूर्ति उपक्रम अधिनियम, 1949 की धारा 4(1) के प्रावधानों के तहत 17 मई, 1951 के एक आदेश के तहत मद्रास राज्य में निहित हो गई। अधिनियम की वैधता को चुनौती दी गई थी। इस न्यायालय ने माना कि 1949 का अधिनियम अधिकारातीत था। निर्णय सुनाए जाने के बाद मद्रास विधानमंडल ने 1954 का मद्रास अधिनियम 29 पारित किया। 1954 के अधिनियम में 1949 के पिछले अधिनियम के मुख्य प्रावधानों को शामिल किया गया और पिछले अधिनियम के तहत की गई कार्रवाई को मान्य किया गया। वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड ने 1954 अधिनियम को चुनौती दी। यह तर्क दिया गया कि सत्यापन अनुभाग अप्रभावी और निष्क्रिय था। वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन में सबमिशन कंपनी लिमिटेड[2] मामला यह था कि वर्ष 1951 में अधिसूचना यह अमान्य और निष्क्रिय था क्योंकि यह अनुच्छेद 31 का उल्लंघन करता था संविधान। इसलिए यह तर्क दिया गया कि इस कारण से।

---

[2] [1963] 2 एस.सी.आर. 747.

इस न्यायालय का निर्णय कि 1949 का अधिनियम अमान्य था, अधिसूचना किसी भी पूर्व-मौजूदा कानून के किसी भी प्राधिकारी द्वारा समर्थित नहीं थी। इस न्यायालय ने उस तर्क को स्वीकार नहीं किया। इस न्यायालय ने कहा कि यदि अधिनियम पूर्वव्यापी प्रभाव में है और धारा 24 को पिछले अधिनियम के प्रावधानों के तहत की गई कार्रवाइयों को पूर्वव्यापी रूप से मान्य करने के उद्देश्य से अधिनियमित किया गया है, तो इसे प्रासंगिक प्रावधानों के बहुत पूर्वव्यापी संचालन का पालन करना होगा जो उस समय आक्षेपित अधिसूचना जारी की गई थी, ये प्रावधान अस्तित्व में थे। यह क़ानून के पूर्वव्यापी संचालन का स्पष्ट और स्पष्ट प्रभाव है। इसलिए इस बात पर विचार करते समय कि अनुच्छेद 31(1) का अनुपालन किया गया है या नहीं, हमें यह मानना चाहिए कि अधिसूचना जारी होने से पहले, अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधान अस्तित्व में थे और इसलिए, अनुच्छेद 31(1) का अनुपालन किया जाना चाहिए। उस अर्थ में"।

वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड मामले में इस न्यायालय ने उस उदाहरण पर जोर देने के लिए संविधान के अनुच्छेद 20 के प्रावधानों का उल्लेख किया जहां संविधान किसी भी कानून के पूर्वव्यापी संचालन को रोकता है। अनुच्छेद 20 में आने वाले शब्दों "उस समय लागू कानून" पर जोर दिया गया था। अनुच्छेद 31(1) में "कानून के अधिकार द्वारा" शब्द अनुच्छेद 20 में आने वाले शब्दों से अलग थे। इस न्यायालय ने कहा कि यदि बाद के कानून विधायिका द्वारा पारित अधिनियम पूर्वव्यापी प्रभाव में था, यह अनुच्छेद 31(1) की आवश्यकता को पूरा करेगा और वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड मामले में लागू अधिसूचना को मान्य करेगा।

वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड मामले में इस न्यायालय का फैसला पहले के अधिनियम के तहत की गई कार्रवाई के सत्यापन के उद्देश्य से पूर्वव्यापी कानून बनाने के लिए विधायिका की क्षमता स्थापित करता है, जिसे एक निर्णय द्वारा घोषित किया गया है। न्यायालय का अमान्य होना. इस बात की सराहना की जानी चाहिए कि यह मान्यता अगले विधान के प्रावधानों के आधार पर है।

अप्रभावी सत्यापन का एक उदाहरण एक उपायुक्त और कलेक्टर, कामरूप और अन्य बनाम दुर्गा नाथ सरमा[3] के मामले में पाया जा सकता है। उस मामले में, बाढ़ नियंत्रण और कटाव की रोकथाम के लिए भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1955 था। इसे 11 अप्रैल, 1955 को पारित किया गया था। असम में बाढ़ नियंत्रण और कटाव की रोकथाम के लिए भूमि अधिग्रहण (मान्यता) अधिनियम, 1960 था। उन भूमियों के अधिग्रहण को वैध बनाने हेतु पारित किया गया जिन पर कब्ज़ा कर लिया गया था। असम सरकार ने उस मामले में 1954 में ज़मीनों पर कब्ज़ा कर लिया। 1955 के अधिनियम के तहत अधिग्रहण का आदेश था। का स्वामित्व के तहत भूमि मुआवजे के लिए दावा प्रस्तुत करने को कहा गया 1955 और 1960 के अधिनियम। सरमा ने दोनों की वैधता को चुनौती दी अधिनियम. उच्च न्यायालय ने माना कि 1955 का अधिनियम उल्लंघनकारी था संविधान के अनुच्छेद 31(2) का, क्योंकि यह संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 से पहले था और 1960 का अधिनियम, 1955 के अधिनियम से स्वतंत्र नहीं था। इस न्यायालय ने माना कि 1960 के अधिनियम की धारा 2, जो 1955 के अधिनियम के तहत ली गई भूमि को यह अधिनियमित करके वैध बनाती है कि इसे 1955 के अधिनियम के प्रावधानों के तहत वैध रूप

---

[3] [1968] 1 एस.सी.आर. 561

से अर्जित माना जाएगा, सत्यापन के उद्देश्य को प्राप्त करने में विफल रही। वजह ये है. 1955 अधिनियम को संविधान के अनुच्छेद 31(2) का उल्लंघन पाया गया क्योंकि यह संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 से पहले था, क्योंकि यह विनियोजित भूमि के उचित समकक्ष का भुगतान सुनिश्चित नहीं करता था। 1955 के अधिनियम को संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन भी पाया गया। 1955 के अधिनियम में उल्लिखित उद्देश्यों के लिए कुछ भूमि की आवश्यकता होने और अन्य उद्देश्यों के लिए कुछ भूमि की आवश्यकता होने के मात्र संयोग से समान स्थिति वाली भूमि के मालिकों के बीच भेदभाव होता था। इस न्यायालय द्वारा 1960 अधिनियम के सत्यापन खंड को पूरी तरह से अप्रभावी माना गया था। 1955 का अधिनियम अमान्य था। 1960 के अधिनियम में 1955 के अधिनियम के तहत अधिग्रहण को मान्य करने का प्रावधान किया गया था। इस न्यायालय ने कहा कि यदि 1955 का अधिनियम अमान्य था तो 1960 के अधिनियम के तहत समझा गया अधिग्रहण भी उतना ही अमान्य था। अनुपात यह है कि 1960 के अधिनियम में यह अधिनियमित करने की कोई शक्ति नहीं थी कि संवैधानिक रूप से अमान्य अधिनियम के तहत अधिग्रहण वैध था। 1960 का अधिनियम 1955 के अधिनियम से स्वतंत्र नहीं था। 1960 के अधिनियम का प्रावधान यह था कि भूमि 1955 के अधिनियम के तहत अर्जित मानी जायेगी। यदि 1955 का अधिनियम असंवैधानिक था तो 1960 का अधिनियम 1955 के अधिनियम को संवैधानिक नहीं बना सकता था।

वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड मामले और द्रुगा नाथ सरमा मामले के बीच अंतर यह है। वेस्ट रामनाड इलेक्ट्रिक डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी लिमिटेड मामले (सुप्रा) में 1954 अधिनियम ने पिछले अधिनियम के तहत कार्रवाइयों और कार्यवाहियों को एक प्रावधान द्वारा मान्य किया कि कार्य या चीजें 1954 अधिनियम के प्रावधानों के आधार पर की गई थीं। 1954 के अधिनियम में कोई संवैधानिक खामी नहीं पाई गई। दूसरी ओर, दुर्गा नाथ सरमा का मामला (सुप्रा) 1955 अधिनियम के तहत 1960 अधिनियम अधिग्रहण द्वारा मान्य है। अधिग्रहण 1960 अधिनियम के तहत या उसके तहत नहीं था। अधिग्रहण 1955 अधिनियम के तहत था। 1955 का अधिनियम संवैधानिक रूप से अमान्य था। इसलिए, पहले के अधिग्रहण का कोई सत्यापन नहीं था।

पूर्वव्यापी कानून द्वारा भेदभाव को दूर करने की विधायी क्षमता का प्रश्न मैसूर राज्य और अन्य बनाम डी. अचैया चेट्टी आदि[4] में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया। सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए निजी भूमि के अधिग्रहण के लिए मैसूर में दो अधिनियम थे। एक था मैसूर भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894। दूसरा था बैंगलोर शहर सुधार अधिनियम, 1945। 1894 अधिनियम के तहत एक अधिसूचना बेंगलुरु में चेट्टी के भूखंडों के अधिग्रहण के लिए जारी किया गया था। चेट्टी ने अधिग्रहण को इस आधार पर चुनौती दी कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम के प्रावधानों का उपयोग भेदभावपूर्ण था क्योंकि अन्य मामलों में सुधार अधिनियम के प्रावधान लागू किए गए थे। हाई कोर्ट ने चेट्टी की दलील स्वीकार कर ली. इस न्यायालय में अपील के लंबित रहने के दौरान बैंगलोर भूमि अधिग्रहण (मान्यता) अधिनियम, 1962 पारित किया गया था। इसने 1962 के वैधीकरण अधिनियम के लागू होने से पहले

---

[4] [1969] 3 एस.सी.आर. 55

भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत किए गए सभी अधिग्रहणों, की गई कार्यवाही, जारी की गई अधिसूचनाओं या आदेशों को मान्य किया। 1962 के वैधीकरण अधिनियम को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि दोनों अधिनियमों में दो अलग-अलग प्रावधान हैं। किराये की प्रक्रियाएँ। यह भी कहा गया कि सुधार अधिनियम एक विशेष कानून था, और इसलिए, अधिग्रहण अधिनियम को विशेष कानून का रास्ता देना था। मैसूर मामले (सुप्रा) में मान्य धारा में यह प्रावधान किया गया है कि मैसूर भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत कार्य करने वाले या कार्य करने वाले राज्य द्वारा बैंगलोर शहर के सुधार, विस्तार या विकास के उद्देश्य से भूमि के प्रत्येक अधिग्रहण को माना जाएगा। वैध रूप से बनाया, धारण या जारी किया गया है। वैधीकरण अनुभाग पर इस आधार पर महाभियोग लगाया गया था कि अभी भी दो अधिनियम थे जो एक ही क्षेत्र को कवर करते थे लेकिन दो अलग-अलग प्रक्रियाएं निर्धारित करते थे। यह भी कहा गया कि अधिग्रहण अधिनियम एक अधिक पूर्वाग्रहपूर्ण प्रक्रिया थी और भेदभावपूर्ण थी। इस न्यायालय ने पाया कि विधानमंडल ने पूर्वव्यापी रूप से इन संपत्तियों के अधिग्रहण के लिए एक ही कानून बनाया है। यह तर्क दिया गया कि अनुच्छेद 14 या पहले किए गए किसी भी अधिग्रहण से प्रभावित अधिग्रहण को तब तक मान्य नहीं किया जा सकता जब तक कि अनुचित वर्गीकरण की बुराई को हटा नहीं दिया जाता। उस आधार पर 1962 के वैधीकरण अधिनियम पर महाभियोग लगाया गया था। इस न्यायालय ने प्रस्तुतीकरण को स्वीकार नहीं किया और कहा, "यदि दो प्रक्रियाएं मौजूद हैं और एक का पालन किया जाता है और दूसरे को छोड़ दिया जाता है, तो किसी दिए गए मामले में भेदभाव पाया जा सकता है। लेकिन विधायिका के पास अभी भी प्रक्रिया में से एक को पूर्वव्यापी कार्रवाई से बाहर करने की क्षमता है।" आपको केवल एक ही प्रक्रिया उपलब्ध छोड़नी होगी, जिसका पालन किया जाना चाहिए और इस प्रकार भेदभाव को गायब कर दिया जाएगा। इस तरह से एक वैध अधिनियम भेदभाव पर काबू पा सकता है। जहां, हालांकि, विधायी क्षमता उपलब्ध नहीं है, भेदभाव कि यदि ऐसी विधायी क्षमता है जिसे विधायिका दो में से एक प्रक्रिया बनाने की शक्ति रखने वाली विधायिका द्वारा हटा सकती है, न कि ऐसी विधायिका द्वारा जिसके पास वह शक्ति नहीं है"

मैसूर मामला (सुप्रा) इस प्रस्ताव के लिए एक प्राधिकरण है यदि विधायी क्षमता है तो विधायिका एक प्रक्रिया को छोड़कर किसी एक प्रक्रिया को पूर्वव्यापी रूप से क्रियान्वित कर सकती है प्रक्रिया केवल उपलब्ध है और इस प्रकार भेदभाव की बुराई दूर हो रही है। वर्तमान अपीलों में 1971 के अधिनियम में बिल्कुल यही हुआ है। 1958 के अधिनियम को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि इसमें दो प्रक्रियाएँ थीं और किसी एक का विकल्प छोड़ा गया था संपदा अधिकारी के अनियंत्रित विवेक के कारण। 1971 का अधिनियम संपदा अधिकारी को ऐसा कोई विवेकाधिकार नहीं देता है। 1971 के अधिनियम के तहत केवल एक ही प्रक्रिया है। 1971 अधिनियम की धारा 20 में निहित डीमिंग प्रावधान 1971 अधिनियम के प्रावधानों के आधार पर किए गए कार्यों को मान्य करता है।

मान्यता अधिनियम का अर्थ उन कार्यों या कार्यवाहियों की अप्रभावीता या अमान्यता के कारणों को दूर करना है जो एक विधायी उपाय द्वारा मान्य हैं। श्रीपृथ्वी में यह न्यायालय! कॉटन मिल्स लिमिटेड एवं अन्य। वी. ब्रोच बरो नगर पालिका और अन्य, (1970) 1 एस.सी.आर. 388 गुजरात नगर पालिकाओं द्वारा कर अधिरोपण (मान्यता) अधिनियम, 1963 से संबंधित है। बॉम्बे म्यूनिसिपल बरो अधिनियम, 1925 की धारा 73 के तहत एक नगर पालिका, नगर पालिका के भीतर स्थित भवन या भूमि या दोनों पर दर लगा सकती है। यह न्यायालय पटेल गोर्धनदास

हरगोविंदा बनाम नगर आयुक्त, अहमदाबाद, (1964) 2 एस.सी.आर. मामले में आयोजित किया गया था। 608 कि 'दर' शब्द को वार्षिक किराये के मूल्य के आधार पर लगान तक ही सीमित रखा जाना चाहिए और यह वैध रूप से पूंजी मूल्य के आधार पर लगान नहीं हो सकता है। इस निर्णय के कारण गुजरात विधानमंडल ने गुजरात नगर पालिकाओं द्वारा कर अधिरोपण (मान्यता) अधिनियम, 1963 पारित किया। 1963 अधिनियम में पूंजी मूल्य या प्रतिशत के आधार पर भूमि और भवनों पर 'दर' के पिछले मूल्यांकन और संग्रह का प्रावधान किया गया था। किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण के विपरीत निर्णय के बावजूद पूंजीगत मूल्य को वैध घोषित किया गया था। इस न्यायालय का पिछला निर्णय 1925 के अधिनियम में आने वाले 'दर' शब्द के अर्थ पर लागू था। मान्यता अधिनियम ने उस कानून का अपना अर्थ और व्याख्या दी जिसके तहत कर एकत्र किया गया था। इस न्यायालय द्वारा यह भी कहा गया था कि अवैध घोषित कर को वैध किया जा सकता है यदि अवैधता का आधार हटाया जा सके। इसलिए, एक वैध कानून को सबसे पहले यह पता लगाकर बरकरार रखा जाता है कि क्या विधायिका के पास विषय वस्तु पर क्षमता है, और दूसरी बात, क्या विधायिका ने सत्यापन के द्वारा उस दोष को दूर कर दिया है जो अदालतों ने पिछले कानून में पाया था।

विधायिका के पास 1971 अधिनियम को लागू करने की विधायी क्षमता थी। इसका मतलब यह है कि यह सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जे वाले व्यक्तियों को बेदखल करने के लिए एक त्वरित प्रक्रिया प्रदान करने के विषय पर कानून बना सकता है। विधायिका के पास पूर्वव्यापी प्रभाव से कानून पारित करने की शक्ति है। 1971 अधिनियम को चुनौती यह है कि 1958 अधिनियम असंवैधानिक है, और इसलिए, असंवैधानिक अधिनियम के तहत किए गए किसी भी कार्य को मान्य नहीं किया जा सकता है। अपीलकर्ताओं की दलील में 1971 अधिनियम के महत्वपूर्ण प्रावधानों की अनदेखी है कि 1971 अधिनियम 16 सितंबर, 1958 से प्रभावी है और 1958 अधिनियम के तहत की गई कार्रवाई 1971 अधिनियम के तहत की गई मानी जाएगी। 1971 के अधिनियम के तहत भेदभाव की कोई बुराई नहीं है। 1971 अधिनियम के तहत केवल एक ही प्रक्रिया है।

यह तर्क दिया गया कि अधिनियम में 'परिसर' शब्द कृषि भूमि पर लागू नहीं होगा। 'परिसर' शब्द का अर्थ किसी भूमि से है। किसी भी भूमि में कृषि भूमि शामिल होगी। अधिनियम में कृषि भूमि पर अधिनियम की प्रयोज्यता को बाहर करने के लिए कुछ भी नहीं है। पंजाब किरायेदारी अधिनियम, 1887 की धारा 42 और 43 का संदर्भ दिया गया था। 1887 अधिनियम की धारा 42 बेदखली पर प्रतिबंध की बात करती है। धारा 43 बेदखली के लिए राजस्व अधिकारी को आवेदन देने का प्रावधान करती है। अपीलकर्ताओं की ओर से कहा गया कि पंजाब किरायेदारी अधिनियम, 1887 के तहत प्रक्रिया उपलब्ध होने से संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होता है। उस विवाद में कोई दम नहीं है. 1971 अधिनियम की धारा 15 सार्वजनिक परिसरों पर अनधिकृत कब्जे वाले व्यक्तियों को बेदखल करने के लिए केवल एक प्रक्रिया प्रदान करती है।

इस न्यायालय द्वारा 1958 के अधिनियम को असंवैधानिक घोषित नहीं किया गया है। 1959 के पंजाब अधिनियम की धारा 5 को इस न्यायालय ने नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स प्राइवेट लिमिटेड मामले (सुप्रा) के फैसले में अनुच्छेद 14 का उल्लंघन माना था। 1958 के केंद्रीय अधिनियम की धारा 5, धारा 5 के समान है। 1959 पंजाब अधिनियम। अपीलकर्ताओं की ओर से दलीलें इस आधार पर आगे बढ़ीं कि 1958 अधिनियम को असंवैधानिक माना जाएगा।

इसलिए यह कहा गया कि 1971 का अधिनियम 1958 के अधिनियम के तहत किए गए कार्यों को मान्य नहीं कर सकता। इसका उत्तर ऊपर बताए गए कारणों से है कि विधायिका 1958 में इस कानून को अधिनियमित करने के लिए सक्षम थी और विधायिका ने 1971 के अधिनियम द्वारा कानून को पूर्ण पूर्वव्यापी संचालन की अनुमति दे दी है। विधायिका के पास पहले के अधिनियम की कमजोरियों को दूर करके पहले के अधिनियम के तहत कार्यों को मान्य करने की शक्ति है। 1971 के अधिनियम ने सत्यापन के उस उद्देश्य को प्राप्त कर लिया है।

इन कारणों से, अपीलें विफल हो जाती हैं और खारिज कर दी जाती हैं। पार्टियां अपनी लागत का भुगतान और वहन स्वयं करेंगी।

बेग, जे. मैं अपने विद्वान भाई रे से पूरी तरह सहमत हूं जिनके फैसले को पढ़ने का मुझे लाभ मिला है। हालाँकि, मैं उस विवाद के बारे में कुछ टिप्पणियाँ जोड़ना चाहूँगा, जो मुख्य रूप से केशवन माधव मेनन बनाम बम्बई राज्य[5] पर आधारित, अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा कुछ दृढ़ता के साथ सामने रखा गया है। बेहराम खुर्शीद पसिकाका बनाम बम्बई राज्य[6]; सगीर अहमद बनाम. यूपी राज्य और अन्य[7]; भीकाजी नारायण धाकरास और अन्य बनाम मप्र राज्य और अन्य.[8]; एम. पी. वी. सुन्दररमैया एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य[9]; दीप चंद बनाम. यूपी राज्य और अन्य.[10]; महेंद्र लाल जैनी बनाम. हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य[11]; बी. शर्मा राव बनाम केंद्र शासित प्रदेश पांडिचेरी[12]; उपायुक्त एवं कलेक्टर, कामरूप एवं अन्य बनाम दुर्गा नाथ सरमा, पी. भूमा रेड्डी बनाम मैसूर राज्य एवं अन्य[13]।

मुझे नहीं लगता कि ऊपर सूचीबद्ध सभी मामले वास्तव में अपीलकर्ताओं की ओर से की गई दलीलों का समर्थन करते हैं। और, जिनसे अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील उनके द्वारा रखे गए किसी भी प्रस्ताव के लिए कुछ समर्थन प्राप्त कर सकते हैं: वास्तव में, दो व्यापक कारणों से, उस स्थिति पर लागू नहीं होते हैं जिस पर हमें हमारे सामने आने वाले मामलों में विचार करना है: सबसे पहले, इस न्यायालय ने अभी तक सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जाधारियों की बेदखली) अधिनियम, 1958 के 32 के किसी भी हिस्से को कानून का एक शून्य हिस्सा घोषित नहीं किया गया है, और इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 141 को लागू करने का कोई सवाल यहां उच्च के समक्ष नहीं उठता है। न्यायालयों। दूसरे, अपीलकर्ताओं के लिए विद्वान वकील का तर्क मुझे पूरी तरह से गलत धारणा पर आधारित लगता है कि सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जेदारों की बेदखली) अधिनियम 32, 1958 के प्रावधान

---

[5] [1951] एस.सी.आर. 228

[6] [1955] 1 एस.सी.आर. 613.

[7] [1955] 1 एस.सी.आर. 707

[8] [1955] 2 एस.सी.आर. 589

[9] [1958] एस.सी.आर. 1422.

[10] [1959) 2 पूरक एस.सी.आर. 8

[11] [1963] पूरक 1 एस.सी.आर. 912.

[12] [1967] 2 एस.सी.आर. 650

[13] [1969] 3 एस.सी.आर. 14

भाग के "उल्लंघन" के लिए शून्य थे। संविधान का III संविधान के अनुच्छेद 13(2) के अंतर्गत आता है, जिसके आधार पर यह प्रस्तुत किया गया था कि जो कानून की नज़र में "नॉन एस्ट" था, या लोकप्रिय भाषा में "अभी भी पैदा हुआ" था, उसे वैध नहीं बनाया जा सकता है, मान्य, या जीवन और बल दिया गया। संवैधानिक अमान्यता के प्रभाव पर अपनी प्रस्तुति का समर्थन करने के लिए, जिन मामलों पर अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील द्वारा भरोसा किया जा सकता था, उनकी जांच से पता चलता है कि इनमें से प्रत्येक मामला ऐसी स्थिति से निपटता है जिसमें या तो प्रारंभिक या व्यक्तिगत रूप से शून्य अधिनियम या इसके तहत की गई कार्रवाई को वैध बनाने की मांग की गई थी।

नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम पंजाब राज्य में, इस प्रश्न पर इस न्यायालय में कोई मतभेद नहीं था कि सार्वजनिक संपत्तियों के अनधिकृत कब्जेदारों को बेदखल करने के लिए एक अलग प्रक्रिया प्रदान करने में, उद्देश्य के बीच कोई उचित संबंध या संबंध था या नहीं। पंजाब सार्वजनिक परिसर और भूमि (बेदखली और किराया वसूली) अधिनियम, 1959, और एक वैध उद्देश्य प्राप्त करने के लिए डिज़ाइन की गई विशेष प्रक्रिया। यहां तक कि उस मामले में बहुमत का दृष्टिकोण भी इस धारणा पर आधारित था कि विशेष प्रक्रिया, अपने आप में, संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं करती है। इसका मतलब यह था कि पंजाब अधिनियम की धारा 5 के तहत विशेष प्रक्रिया को संविधान के अनुच्छेद 13 (2) द्वारा अपेक्षित "उल्लंघन" नहीं माना गया था। हालाँकि, दोनों के बीच मतभेद था इस न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने इस प्रश्न पर कि क्या यह विशेष है और अधिक कठोर प्रक्रिया, जब के संदर्भ में देखा जाए अनाधिकृत कब्जाधारियों के खिलाफ मुकदमा दायर करने के लिए सामान्य कानून के तहत अनुमत कम कठोर प्रक्रिया असंवैधानिक हो गई या नहीं। यह माना गया कि "अतिरिक्त" कठोर उपाय, अन्यथा आगे बढ़ने के विकल्प के साथ, अनधिकृत कब्जाधारियों के बीच भेदभाव के लिए जगह छोड़ देता है जिनके खिलाफ दोनों प्रक्रियाओं में से किसी एक का उपयोग किया जा सकता है। इसलिए, बहुमत का विचार यह था कि, हालांकि, पंजाब अधिनियम की धारा 5 के तहत प्रदान की गई प्रक्रिया अन्यथा वैध हो सकती है, फिर भी, यह सामान्य के तहत मौजूद किसी अन्य प्रक्रिया को अपनाने के विकल्प के कारण अमान्य या उपयोग में आने में असमर्थ है। देश का कानून जो अधिनियम के बाहर है। यदि पंजाब अधिनियम को तैयार करने में कोई दोष या खामी रह गई थी, जिसने धारा 5 को अमान्य कर दिया, तो यह था कि इसमें खुली छोड़ी गई वैकल्पिक प्रक्रिया के खिलाफ कोई निषेध नहीं था और न ही यह कि इसमें कुछ ऐसा था जो अपने आप में निषिद्ध था। और, अधिनियम में जो कुछ भी शामिल नहीं था वह अभी भी अधिनियम के बाहर कुछ था। इस प्रकार पंजाब अधिनियम की धारा 5 की असंवैधानिकता वास्तव में अधिनियम से बाहर के मामलों से उत्पन्न हुई।

यह सच है कि नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स मामले (सुप्रा) में, इस न्यायालय द्वारा यह माना गया था कि पंजाब अधिनियम की धारा 5 "शून्य" थी, लेकिन, यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह परिणाम संदर्भ में अधिक कठोर वैधानिक प्रक्रिया की जांच करने के बाद हुआ। सामान्य प्रक्रियात्मक कानून का. इसलिए, वह उस मामले में बहुसंख्यक दृष्टिकोण की व्याख्या करने के इच्छुक है, इससे अधिक कुछ भी नहीं बताया गया है, हालांकि अधिक कठोर प्रक्रिया अन्यथा वैध हो सकती है, फिर भी, यह केवल अपनाने में असमर्थ या स्थिति में "अप्रवर्तनीय" बन गई है। वहां विचार किए गए कानून के प्रावधानों की समग्रता से उभर रहा है। मुझे नहीं लगता कि उस मामले में इस दृष्टिकोण को उचित

ठहराने के लिए कुछ भी किया गया था कि पंजाब अधिनियम की धारा 5 शुरू से ही शून्य थी। इस प्रश्न पर नॉर्दर्न इंडिया कैटरर्स केस (सुप्रा) में चर्चा नहीं की गई थी, क्योंकि किसी प्रावधान को मान्य करने की कोई विधि जिसे वैध माना जा सकता था लेकिन जो केवल देश के अन्य सामान्य कानून के संदर्भ में "शून्य" हो गया था, उस पर वहाँ विचार नहीं किया जा रहा था .

1971 के अधिनियम का परिणाम मुझे पूर्वव्यापी रूप से "पुन: अधिनियमन" से कम नहीं लगता है, ताकि इस तर्क के लिए कोई आधार खुला न रह जाए कि इस तिथि के बाद से सार्वजनिक परिसरों के अनधिकृत कब्जेदारों के बीच भेदभाव की कोई संभावना है। जिससे 1971 का अधिनियम लागू हुआ। किसी भी पिछली कार्रवाई की वैधता, यहां तक कि 1958 के पुराने अधिनियम 32 के तहत भी, 1971 के अधिनियम 40 के प्रावधानों के आलोक में तय की जाएगी। यदि 1958 के अधिनियम 32 के तहत की गई कुछ कार्यवाही अभी भी लंबित है, जैसा कि इसमें है अपीलकर्ताओं का मामला मैसर्स। भारतीय होटल, चूपरा, बिहार, इसकी शुद्धता और वैधता 1971 के अधिनियम 40 द्वारा निर्धारित आवश्यकताओं द्वारा नियंत्रित की जाएगी क्योंकि इसे नए अधिनियम के तहत कार्यवाही माना जाएगा। पंजाब के अन्य अपीलकर्ताओं हरि सिंह और अन्य के मामले में, बेदखली 1958 के अधिनियम 32 के तहत प्रक्रिया के अनुसार हुई। लेकिन, यहां तक कि ये अपीलकर्ता भी शिकायत नहीं कर सके कि अधिनियम में पाई गई प्रक्रिया द्वारा संरक्षित कोई भी अधिकार। 1971 के 40 का उल्लंघन किया गया, क्योंकि बेदखली की प्रक्रिया, जिसमें जिला न्यायाधीश के पास अपील करने का अधिकार भी शामिल है, दोनों अधिनियमों के तहत समान है। वास्तव में, हमारे समक्ष अपील के तहत निर्णय 1971 के अधिनियम 40 के लागू होने से पहले दिए गए थे। 1971 का अधिनियम इन मामलों के लिए केवल इसलिए प्रासंगिक हो गया क्योंकि 1958 के अधिनियम के तहत प्रक्रिया की वैधता पर आपत्ति पिछली कमी को पूर्वव्यापी रूप से भरने के बाद अपीलकर्ताओं के लिए उपलब्ध नहीं थी।

विद्वान वकील ने आग्रह किया था कि संविधान के भाग III द्वारा प्रदत्त अधिकारों का उल्लंघन करने की विधायी अक्षमता को संविधान के वैध संशोधन के बिना किसी भी कानून द्वारा ठीक नहीं किया जा सकता है। लेकिन, मुझे ऐसा लगता है कि हमारे सामने कोई "शून्य" या "अप्रवर्तनीय" (एक शब्द जिसे मैं ऐसे संदर्भ में "शून्य" के स्थान पर उपयोग करूंगा) कानून नहीं था जिसे मान्य किया गया हो। भले ही "सत्यापन" हुआ हो और पुनः अधिनियमन नहीं हुआ हो, वास्तव में, इसने किसी भी संभावित भेदभावपूर्ण कृत्य को भी अमान्य कर दिया है जो कि 1958 के अधिनियम की अवधि के दौरान किया गया हो सकता है, जिसका हमारे सामने कोई सबूत नहीं है। सरकारी मानसिक अधिकारियों द्वारा, कुछ अनधिकृत कब्जाधारियों के खिलाफ सामान्य कानून के तहत कार्यवाही में।

यह प्रस्तुत किया गया था कि 1971 के अधिनियम 40 की धारा 20 का प्रभाव वास्तव में अतीत में किए गए "कथित" कार्यों को मान्य करना था, ताकि इसे कानूनी रूप से "नॉन एस्ट" मान लिया जाए, और इसलिए, यह इसे 1971 के सार्वजनिक परिसर (अनधिकृत कब्जाधारियों की बेदखली) अधिनियम 40 के तहत की गई कार्रवाई जितना अच्छा "माना" नहीं जा सकता है। इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने से प्रावधान को अर्थहीन माना जाएगा। मुझे लगता है कि हमने जो दृष्टिकोण अपनाया है, उसमें यह शामिल है कि यह प्रावधान किसी भी पिछले कार्य में अवैधता को ठीक नहीं करेगा, जो कि 1971 के अधिनियम 40 द्वारा प्रदान किए गए मानकों और प्रक्रिया द्वारा परीक्षण किए जाने पर अभी भी मौजूद हो सकता है। यह एक तार्किक और प्राकृतिक परिणाम है "माना गया" शब्द का उपयोग

करना। "कथित" शब्द का उपयोग केवल निरस्त अधिनियम के तहत की गई पिछली कार्रवाई का वर्णन या पहचान करने के लिए किया गया था और इसके अलावा इसका कोई प्रभाव नहीं था। वह कार्रवाई अब 1971 के अधिनियम 40 के तहत हुई मानी जाएगी।

हमारे समक्ष यह भी तर्क नहीं दिया गया है कि अपीलकर्ता के खिलाफ कोई भी कार्रवाई अधिनियम के प्रावधानों द्वारा अमान्य है 1971 का 40। अधिक तथ्य यह है कि 1958 के अधिनियम 32 के तहत अपनाई गई प्रक्रिया पिछले अधिनियम के कारण थी, जब वह प्रक्रिया, स्वयं द्वारा अपनाई गई, संवैधानिक गारंटी का उल्लंघन नहीं करती थी, इसकी कमी या कमी को लाइलाज नहीं बनाती थी। उस प्रक्रिया की अमान्यता, यदि कोई हो, केवल इसके परिणामस्वरूप हो सकती है सामान्य कानून के तहत क़ानून और प्रक्रिया से किसी चूक के बाहरी कारकों का संचालन या उस पर प्रभाव। मैं उस कानूनी स्थिति की तुलना करूंगा, जो इस प्रकार उभर सकती है, जिसमें कठोर प्रक्रिया केवल छाया के अधीन थी या 1958 के अधिनियम 32 के बाहर आने वाले कारणों के कारण निलंबन या अप्रवर्तनीयता की स्थिति में थी। एक बार उन कारणों को समाप्त कर दिया जाए नए अधिनियमन में, छाया हट जाती है और पुरानी प्रक्रिया अपने नीचे के तत्व में कोई बदलाव किए बिना एक नए स्वरूप में पूर्वव्यापी रूप से क्रियाशील और प्रभावी हो जाती है। यदि किसी को ऐसी प्रक्रिया में निहित अधिकार नहीं मिल सकता है जो अपने आप में संवैधानिक गारंटी का उल्लंघन नहीं करती है, तो कोई भी इस बात पर जोर नहीं दे सकता है कि इसमें एक विशेष वर्णनात्मक लेबल नहीं होना चाहिए जो केवल अर्थ को स्पष्ट करने के लिए है। आख़िरकार, हम इस्तेमाल किए गए शब्दों के वास्तविक अर्थ और प्रभाव के बारे में चिंतित हैं, न कि इस बात के बारे में कि शब्दों के साथ केवल चतुराईपूर्ण खेल से उन्हें क्या दर्शाया जा सकता है। 1971 के अधिनियम 40 द्वारा जो निर्धारित किया गया था उसका अचूक प्रभाव यह था कि अधिनियम के बाहर किसी भी तरह से सार्वजनिक संपत्तियों के अनधिकृत कब्जेदारों को बेदखल करने का विकल्प पूर्वव्यापी रूप से बंद कर दिया गया था, यह स्पष्ट रूप से संसद की विधायी क्षमता के भीतर था।

मेरे विद्वान भाई रे द्वारा दिए गए सभी कारणों के साथ-साथ ऊपर दिए गए कुछ और कारणों से मैं सम्मानपूर्वक अपने विद्वान भाइयों द्वारा दिए गए आदेशों से सहमत हूं।

वी.पी.एस.

अपीलें खारिज.

AISHWARYA PRIYA